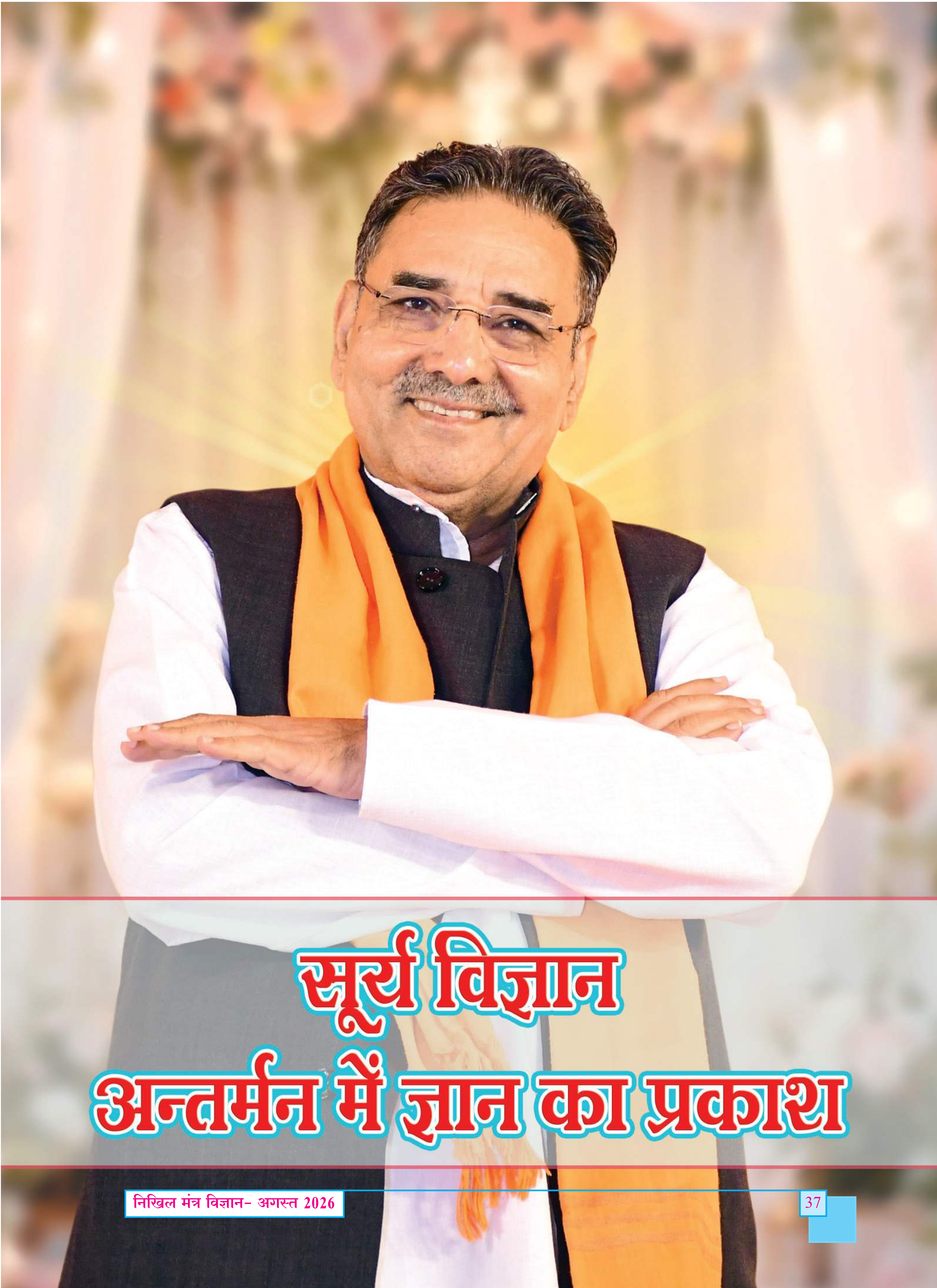

सूर्य विज्ञान
अन्तर्मन में ज्ञान का प्रकाश

वर्ष का सबसे पहला मंगलपर्व मकरसंक्रान्ति यह सूर्य दिवस है, शौर्य दिवस है, कर्म प्रारम्भ करने का दिवस है, इस सूर्य को अपने हृदय में भी आलोकित करो और कर्म पथ पर अग्रसर हो जाओं। सद्‌गुरुदेव का यह विशिष्ट प्रवचन -

मकर संक्रान्ति को सूर्य दक्षिणायान से उत्तरायण में प्रवेश करते है और मकर संक्रान्ति से सारे शुभ कार्यों का प्रारम्भ होता है। इस कारण मकर संक्रान्ति एक Milestone है।

ठीक इसी प्रकार नित्य सूर्यदेव आपको जाग्रत करते है, सूर्य की ज्योति प्रकाश जिसे उषाकाल कहा गया है। उस उषा काल में हम नींद से जागकर क्रिया की ओर अग्रसर होते है। सोये हुए है, जाग जाते है। कोई अर्लाम की आवश्यकता नहीं पड़ती, सूर्य का प्रकाश आपको ठकठकाता है कि हे मनुष्य मैं आ गया हूं। अब जागों और अपना-अपना काम करो।

इसीलिये सूर्य की प्रातःकालीन प्रार्थना -

एहि सूर्य सहस्त्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां देवी गृहाणार्घ्यं दिवाकर।।

हे सूर्य आप सहस्त्र किरणों से युक्त जगतपति है, मेरा अर्घ्य ग्रहण कर मुझ पर अनुकम्पा करें।

सूर्य तो रोज उदय होता है पर शिष्य के जीवन में सूर्य कब उदय होता है? जब वह पहली बार गुरु से मिलता है और प्रार्थना में कहता है कि -

अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन श्लाकया
चक्षुरन्मीलितं तस्मै श्री गुरुवै नमः

हे गुरुदेव! ज्ञान अंजन रूपी श्लाका से आपने अज्ञान रूपी अंधकार से अंधे हुए लोगों की आंखें खोल दी और मंत्र ज्ञान से नेत्र खोल दिये है आपको मेरा नमन है।

हे गुरुदेव मेरे जीवन में अज्ञान रूपी अंधकार का नाश करो।

अब अंधकार का सम्पूर्ण नाश तो सूर्य के द्वारा ही हो सकता है। जो कार्य सूर्य के प्रकाश में सम्पन्न होता है, वह अन्य प्रकार के प्रकाश में सम्पन्न नहीं हो सकता है क्योंकि सूर्य अपना प्रकाश चारों और फैलाता है।

गहन से गहन अधंकार को भी सूर्य की किरणें भेद देती है और सूर्य वह देव है जो देने में किसी प्रकार की आनाकानी नहीं करते।

ठीक उसी प्रकार गुरु भी ज्ञान का प्रकाश शिष्य के जीवन में प्रत्येक रूप से प्रदान करते है, जिससे वह सम्पूर्ण रूप से आलोकित हो जाये, प्रकाशित हो जाये और उसके जीवन की रोग-बाधाएं समाप्त हो जाये क्योंकि अंधकार रोग, बाधा, भय का स्वरूप है।

हम सब यह कहते है कि **भूत-प्रेत-पिशाच भी अंधकार में भ्रमण करते है।** आप भी अपने बच्चों को डराने के लिये यही कहते है कि रात हो गई, सो जा नहीं तो भूत आ जायेगा।

अब सोचों भूत तो भूत है, वह अंधकार में ही क्यों भ्रमण करता है? क्योंकि अंधकार है अज्ञान का स्वरूप और जब अज्ञान आता है तो भूत-प्रेत आते है और जब अज्ञान का अंधेरा दूर हो जाता है और ज्ञान का प्रकाश आता है तो भूत-प्रेत सब भाग जाते है, बाधाएं भाग जाती है।

इसीलिये मैं कहता हूं कि गुरु शिष्य के जीवन में भूत-प्रेत भगाने वाला ज्ञान 'विद्या' है, ज्ञान सूर्य है।

इसीलिये गुरु वन्दना में हम कहते है,

ज्ञानशक्ति समारुढ तत्वमाला विभूषिणे
भुक्तिमुक्ति प्रदात्रे च तस्मै श्री गुरुवै नमः

तो भाई! गुरु ज्ञान शक्ति का स्वरूप है और जीवन में गुरु ही ज्ञान द्वारा भोग और मुक्ति का मार्ग प्रदान करते है।

इसी प्रकार सूर्य देव को मित्र देव कहा गया है। एक सूर्य नहीं हमारे शास्त्रों में द्वादश आदित्य का वर्णन आता है। **विवस्वान (सूर्य), आर्यमन, त्वष्ट्र, सविता, भग, धात्र, मित्र, वरुण, अंश, पूषन, इंद्र और विष्णु (वामन के रूप में)** ये सभी मित्र देव है, सूर्य के स्वरूप।

इन्द्र भी सूर्य का स्वरूप, विष्णु भी सूर्य का स्वरूप, वरुण भी सूर्य स्वरूप और विस्वान सूर्य का स्वरूप है।

विवस्वान का अर्थ है जो उज्वल प्रकाशवान हो। वे संसार को जीवनदायी ऊर्जा प्रदान करने वाले सूर्य देव है। शास्त्रों में विवेचन आता है कि सूर्य विवस्वान, कश्यप और अदीति के पुत्र है इसलिये उन्हें आदित्य कहा जाता है।

हम सभी वास्तव में सूर्यवंशी है क्योंकि प्रत्येक जीव सूर्य की ऊर्जा का ही स्वरूप है और सूर्य को संसार की आत्मा कहा गया है।

सीधी बात है, आप में और सभी प्राणी सूर्य के अंश है क्योंकि संसार की आत्मा है सूर्य, तो जीवात्मा आत्मा से अलग कैसे हो सकती है?

सूर्य निरन्तर प्रकाशित रहते है और हमें कर्म करने की प्रेरणा देते है। वे न केवल प्रकाश और ऊर्जा का स्रोत है बल्कि निस्वार्थ कर्मयोगी का स्वरूप है।

पूरे वर्ष के 365 दिन में सूर्य तो कभी विश्राम नहीं लेना, कोई आलस्य नहीं। कैसा भी मौसम हो वे अपने कर्त्तव्य को निभाते है। कभी बादलों में छिप जाते है, कभी उनकी किरणें तप्त कर देती है। उनकी निष्ठा में कोई कमी नहीं है। अब एक विचित्र बात -

आज है सण्डे का दिन, रविववार और आप सब को रविवार का बहुत इंतजार रहता है कि कब सण्डे आये, पूरे छः दिन सण्डे की प्रतिक्षा करते है। आपके कार्य करने की भी एक सीमा है। इसीलिये शरीर से थक जाते है, थोड़ा मन से भी थक जाते है और रविवार को हमने आराम का नाम दे दिया है, भाव दे दिया है जिससे हमारी क्रिया पुनः जीवन्त हो जाये।

आप तो रविवार को छुट्टी ले लेते है, रेस्ट करते है, जिससे हमारी पूरी क्रिया पुनः जीवन्त हो जाये, नया जोश आये, जिससे हम और अधिक क्रियाशील हो सके।

यही तो है सूर्य की विशेषता की वह हमें जीवन्त बनायें, जाग्रत बनायें, तरो-ताजा रखें।

इसलिये सूर्य को अग्नि देव कहा गया है। प्रभा का देव कहा गया है वे ग्रह अधिपति है।

सण्डे की छुट्टी से मुझे याद आया कि आपकी गृहलक्ष्मी भी तो निरन्तर और निरन्तर सातों दिन क्रियाशील रहती है। उसके लिये तो सण्डे को डबल काम हो जाता है। आप घर में बैठे-बैठे फरमाईशें बतातें रहते है। फिर भी थकती नहीं है 365 दिन निरन्तर और निरन्तर क्रियाशील रहती है।

क्योंकि वह शक्ति का साकार रूप है और शक्ति उसे ही कहा गया है जो थकती नहीं है, कभी रुकती नहीं है। निरन्तर और निरन्तर सूर्य की भांति क्रियाशील रहती है।

मेरे तो सलाह है कि आप सूर्य का ध्यान करें, उन्हें प्रणाम करें तो अपने घर की स्त्री शक्ति को भी अवश्य प्रणाम करें। सूर्य को सुबह-सुबह आप अर्घ्य देते है तो मेरे सलाह मानों कभी-कभी एक गिलास जल, एक कप चाय खुद बनाकर अपनी स्त्री शक्ति को अर्पण अवश्य करें।

आपको भी शक्ति मिलेगी। यह भी सूर्य का अर्घ्य है, शक्ति का अर्घ्य है।

अब मैं एक गंभीर बात पर आता हूं। सूर्य में प्रकाश है, सूर्य में तेज है। आप सूर्य पुत्र है पर सूर्य में और क्या विशेषता है?

सबसे बड़ा तत्व है आकर्षण तत्व और यह सबसे बड़ा तत्व है। **यह सारा संसार आकर्षण से ही चल रहा है, यदि जीवन में आकर्षण का तत्व न हो तो, यह संसार तो युद्ध भूमि बन जायेगा, एकाकी हो जायेगा, किसी को किसी से मतलब नहीं, यह जीवन चल रहा है नहीं चल रहा है, आनन्द आ रहा है या नहीं आ रहा है।**

जीवन में मूल आनन्द तत्व है आकर्षण।

कहते है शेर बड़ा ही बलवान जानवर होता है। सर्कस में एक रिंग मास्टर उसे भी पालतू बना देता है। आपने भी अपने घर में एक शेरनी को आकर्षण वश ही सारे कार्यों पर लगा दिया है कि वह आपके गृहस्थ कार्य को सम्भालती रहे।

शक्ति जो शेर की सवारी करती है, वह गृहस्थी के आकर्षण से ही घर-परिवार जोड़ती है।

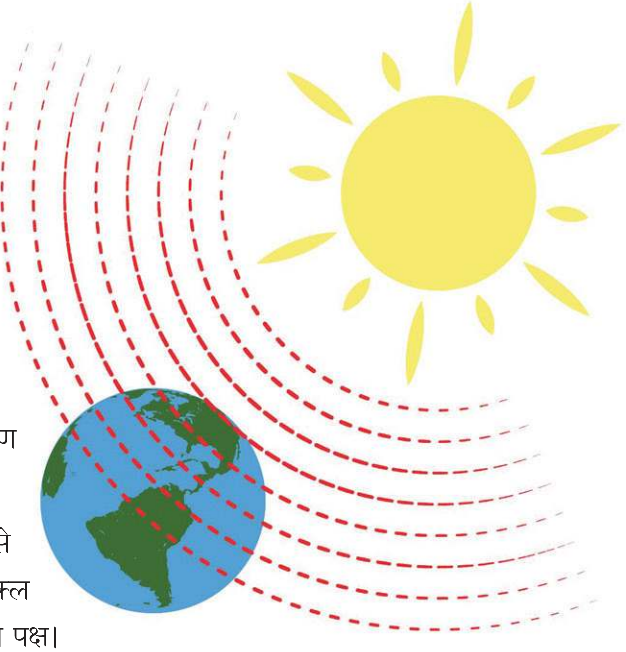

देखों सूर्य के आकर्षण से पृथ्वी अपनी कक्षा में सूर्य के चारों और भ्रमण करती हैं वह अपनी धूरी पर घूमती है, वह स्वतंत्र है और इस प्रकार घूमकर दिन और रात की रचना करती है लेकिन सूर्य के आकर्षण चक्र को तो नहीं छोड़ती।

ठीक इसी प्रकार चन्द्रमा भी आकर्षण के प्रभाव से ही पृथ्वी के चारों ओर वृत्ताकार रूप में 28 दिन में एक पूरा भ्रमण करता है।

यह बात जरूर है कि शक्ति और प्रकाश उसे भी सूर्य से ही मिलता है। जिन दिनों में पूर्ण प्रकाश मिलता है वह शुक्ल पक्ष और जिन-जिन देखों में कम प्रकाश मिलता है वह कृष्ण पक्ष।

अब चन्द्रमा के प्रभाव में समुद्र का जल आकर्षित होता है और उसी के प्रभाव से समुद्र में ज्वार-भाटा जाता है। तो हमारे ऊपर सूर्य चन्द्रमा और जल तीनों का प्रभाव पड़ता है।

मनुष्य है भूमि स्वरूप, उसमें तीन तत्व प्रमुख है, सूर्य तत्व, चन्द्र तत्व, जल तत्व और हमारी देह में जल, वायु, चन्द्रमा की शीतलता और सूर्य का तेज न हो तो क्या स्थिति बन जायेगी। यह स्थूल शरीर शुष्क हो जायेगा।

तो भाई सबसे बड़ा तत्व कौन सा हुआ जो इन सबको जोड़कर देखता है। **सबसे बड़ा तत्व है आकर्षण तत्व। इसी कारण तो यह जगत हमें प्यारा लगता है और यह स्वतः जाग्रत होता है।**

आप हजारों लोगों से मिलते है। सबके प्रति तो आकर्षित नहीं होते। किसी-किसी के प्रति एकदम आकर्षित हो जाते है और किसी-किसी के प्रति विकर्षित हो जाते है। यह हमारे भीतर के सूर्य का प्रभाव है।

सबसे बड़ी बात है कि **आकर्षण से ही जगत बंधा हुआ है।** पत्रिका में भी जब आकर्षण, सम्मोहन, वशीकरण की साधना आती है तो आप बहुत प्रसन्न हो जाते है। आप सोचते है क्या मैं किसी को वशीकरण कर सकता हूं, क्या मैं किसी को सम्मोहित कर सकता हूं, क्या मैं किसी को आकर्षित कर सकता हूं। क्यों है ऐसा? क्योंकि आप में स्वयं में एक विशेष आकर्षण तत्व है जो दूसरे तत्व से मिलना चाहता है। आप किसी को अपना दास नहीं बनाना चाहते, यह प्रेम का भाव है।

हमारे यहां एक महान् ऋषि हुए है - रावण। जिन्होंने तंत्र के कई ग्रंथों की रचना की। रावण कृत उड्डीश तंत्र तो सम्मोहन-वशीकरण का आधारभूत ग्रंथ है। कभी किसी समय साधकों को मैं यह विशेष प्रकार की साधनाएं भी अवश्य सम्पन्न कराऊंगा।

अब देखों, शिव और शक्ति की प्रार्थना करते हुए शिव ताण्डव स्तोत्र में रावण कहते है, बहुत प्रेम रचना है।

अखर्व सर्व मङ्गला कला कदंब मञ्जरी
रस प्रवाह माधुरी विजृम्भणा मधु व्रतम् ।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्त कान्ध कान्तकं तमन्त कान्तकं भजे ।।

अतीव मंगलमयी पार्वती की कला रूपी कदम्ब वृक्ष की मंजरी के मकरन्द के प्रवाह की बढ़ती हुई माधुरी का पान करने वाले भ्रमर के समान जो भगवान शिव हैं तथा जो कामदेव त्रिपुरासुर, दक्ष यज्ञ, हाथी, अंधकासुर एवं यमराज का भी अंत करने वाले हैं, उनकी मैं उपासना करता हूं।।

स्पष्ट कह रहे है कि भगवान शिव और शक्ति का मिलाप हो रहा है। वही शिव राक्षसों का, यमराज का अंत करने वाले है।

तो प्रेम शक्ति और युद्ध शक्ति अलग-अलग नहीं है। जो प्रेम के उच्च स्तर पर पहुंच जाता है, वह आकर्षण भाव में भगवान की स्तुति सम्पन्न करता है और कहता है कि -

जटा कटाह सम्भ्रम भ्रमन् निलिम्प निर्झरी,
विलोल वीचि वल्लरी विराज-मान मूर्धनि।
धगद् धगद् धगज् ज्वलल् ललाट पट्ट पावके
किशोर चन्द्र शेखरे रतिः प्रति क्षणं मम ।।

जिस शिव के शीश पर गंगा वेगपूर्वक घूमती हुई लहरा रही है, तथा जिनके ललाट में धक्-धक् ज्वालायें जल रही हैं, जिनके सिर पर उदीयमान बाल चन्द्रमा विराजमान है, उन्हीं भगवान शंकर में मेरा अनुराग निरन्तर बढ़े।।

भगवान के आकर्षण में ही तो हम अपने नेत्र बंद कर अपने मन की बात कहते है, जो जगत से प्रेम कर सकता है वही ईश्वर से प्रेम कर सकता है।

'मैं प्रेम करता हूं...', यह बहुत बड़ा मंत्र है क्योंकि प्रेम हर एक से नहीं किया जा सकता। एक व्यक्ति पचास व्यक्तियों से घृणा कर सकते है लेकिन 50 व्यक्ति से प्रेम नहीं करता, कोई-काई ही अच्छा लगता है।

क्या हमारा प्रेम का विस्तार, आकर्षण का विस्तार हजारों-हजारों के प्रति नहीं हो सकता है?

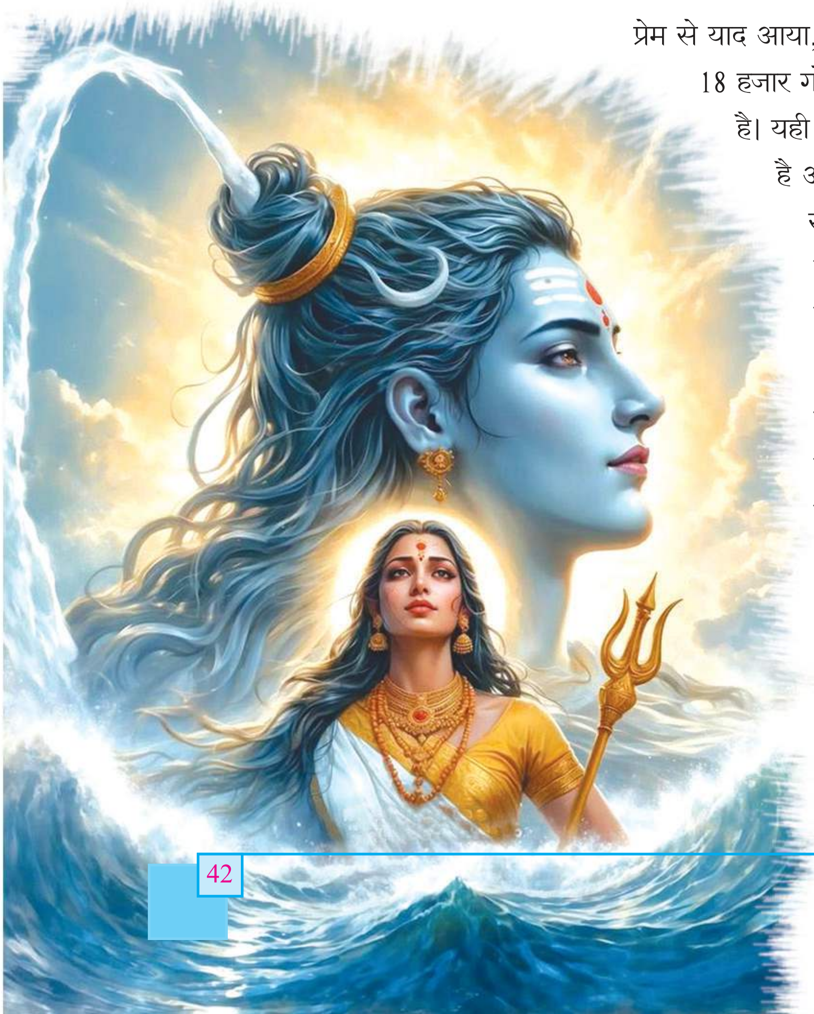

प्रेम से याद आया, हमें श्रीकृष्ण बहुत मधुर लगते है। वह श्रीकृष्ण जो 18 हजार गोपियों के साथ, एक साथ महारास सम्पन्न कर सकते है। यही तो आकर्षण तत्व जीवन को प्रेम से संचारित करता है और प्रेम से ही यह संसार चल रहा है। घृणा से यह संसार नहीं चल सकता। युद्ध होते है, तो घृणा से युक्त होते है। अधिकार की भावना जमाने की कोशिश होती है। प्रेम की भावना से तो सृष्टि में वृद्धि होती है।

सूर्य का धरती के प्रति असीम प्रेम है इसी के कारण जमीन के भीतर अंधकार में दबा हुआ एक बीज भी अंकुरित हो जाता है। वह जमीन को फोड़कर बाहर आ जाता है।

वह चाहता है कि मुझे बड़ा होना है। यह है सूर्य और एक बीज का प्रेम।

आप भी शिष्य हो, आपके मन में यह भावना होती है कि गुरु के आकर्षण में मैं बड़ा हो जाऊं, यह बड़ा होने की भावना ही जीवन में शक्ति को संचालित करती है। भीतर की शक्ति के साथ जब आकर्षण तत्व युक्त हो जाता है तो दोषों का शमन होता है।

एक और विशेष बात है आप महाकाली को देखों, रूप बड़ा ही भयावह है आप उसे किस रूप में देखते है? प्रेम के रूप में और जब हम उसके प्रति आकर्षित हो जाते है, समर्पण युक्त हो जाते है तो वह भयावह रूप भी हमें तेजोमय लगता है। हमारे भय को बढ़ाता नहीं है अपितु हमारे भय का नाश करता है क्योंकि महाकाली के प्रति हमारी आकर्षण शक्ति जुड़ गई है।

आप उच्च स्वर में नवार्ण मंत्र **'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चै'** और काली मंत्र **'।। ॐ क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं महाकालिके क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं फट्।।'** का मंत्र जप करते है तो आप बाह्य आखों से भयावह रूप नहीं देखते आप आन्तरिक नेत्रों से उसका कृपामय स्वरूप देखते है। आकर्षण में आबद्ध हो जाते है तब हमारे शरीर में एक ऊष्मा जाग्रत होती है, शक्ति जाग्रत होती है।

बड़ा ही रौद्र रूप दिखाया गया है, चाहे वह शिव का हो, चाहे भैरव का है लेकिन हमें भय नहीं लगता क्योंकि उनके प्रति आकर्षण का भाव होता है।

यह आकर्षण का भाव तब तक जाग्रत नहीं होगा, तब तक आप मृत प्रायः जीवन ही जीयेंगे। चल रहा है जीवन।

जैसे ही प्रेम, आकर्षण का भाव आता है। सीखने, समझने की प्रवृत्ति आती है। विद्या और ज्ञान की प्रवृत्ति आती है।

इसीलिये आकर्षण और सम्मोहन ही जीवन का आधार है।

तो प्रेम और आकर्षण है जीवन का आधार। प्रेम है तो सबकुछ संभव है। प्रेम के वशीभूत ही भगवान है।

श्रीकृष्ण कौरवों की सभामें पाण्डवों के राजदूत बनकर गये। सभा के बाद दुर्योधन ने अभिमान से कहा - महाराज! बड़ी तैयारी से आपके लिये भोजन बना है। चलकर ग्रहण करें।

भगवान ने उत्तर दिया - भैया! मैं तो नहीं खाऊंगा।

दुर्योधन ने पूछा - क्यों नहीं खायेंगे?

भगवान ने कहा - देखों, दुर्योधन! भोजन करने के तीन कारण होते है - भूख का कारण, भय के कारण या प्रेम के कारण।

भूख से मैं मरता नहीं, तुमसे किसी प्रकार का भयभीत मैं होता नहीं जो भय के कारण मुझे भोजन करना पड़े और प्रेम भाव तुममें है नहीं। इसलिये मैं यहां भोजन नहीं करूंगा।

यह महाभारत की कथा है। उसके बाद भगवान बिना बुलाये पहुंच गये विदुरानी के यहां। विदुरानी में श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम था तो उसके प्रेम के वशीभूत प्रभु ने उसके हाथ से प्रेम से दिये गये केले के छिलके भी खा लिये।

अरे भाई! जीवन में इसी प्रेम भाव का विकास करना है। तब मनुष्य तो क्या देवता भी आपकी ओर आकर्षित हो जायेंगे।

इसी प्रेम भाव के कारण चेहरे पर ओज, तप, प्रकाश आता है। यही मनुष्य को आकर्षण युक्त बनाता है। तब वह सम्मोहन शक्ति से युक्त हो जाता है।

सूर्य है जीवन में तेज का स्वरूप, ओज का स्वरूप। और सूर्य के सबसे निकट ग्रह है शुक्र और शुक्र ग्रह कामनाओं का, भोग विलास का, सौन्दर्य का, रति-अनंग का, प्रेम का ग्रह कहा गया है। शुक्र और रज के प्रवाह से ही संसार में रचना होती है।

यदि शुक्र भाव कमजोर हो जाता है तो मनुष्य अपने जीवन में दरिद्री बना रहता है, उसकी कामनाओं की पूर्ति होती ही नहीं, वह भटकता रहता है। तो सूर्य और शुक्र का सीधा सम्बन्ध है। जिसमें सूर्य भाव तीव्र होता है वह समाज का नेतृत्व करता है और सामान्य शब्दों में कहें तो उसकी बात को कोई टाल नहीं सकता है और शुक्र तत्व तो लक्ष्मी का स्वरूप है क्योंकि हमारा यहजीवन कामनाप्रद जीवन है।

यदि मुझे एक लाईन में कहना पड़े कि यह जीवन क्या है तो मैं कहूंगा, कामनाओं का अथाह सागर जिसमें मनुष्य कर्मशील होकर अपनी एक-एक कामना को पूर्ण करता है और कामनाओं की पूर्ति लिये मनुष्य प्रयत्न करता है और जब फल प्राप्ति होती है तो उसे अथाह शांति और संतोष का अनुभव होता है, फिर नये जोश से भरता है।

फिर नयी कामनाएं, फिर नया जोश और फिर वही चक्र, फिर वही कामना।

एक बात समझ लेना, कामना और तृष्णा में बड़ा अन्तर है। कामना का अर्थ है - जिसे हम अपने कार्य से, कर्म से प्राप्त करना चाहते है और तृष्णा का अर्थ है जो हमें बिना कर्म के ही प्राप्त हो जाये।

एक बार एक छोटा बालक सूर्य प्रार्थना कर रहा था और सूर्य से पूछने लगा - हे सूर्यदेव! आप इतनी मेहनत क्यों करते है? क्या आपको यह चिन्ता नहीं होती कि लोग आपके प्रकाश का सही-सही उपयोग नहीं कर रहे है।

सूर्य ने जो उत्तर दिया ध्यान से सुनना - सूर्य कहते है हे पुत्र! मेरा धर्म कर्म करना है। मैं प्रति दिन निरन्तर अपना प्रकाश फैलाता हूं, यह नहीं सोचता हूं कि इसका उपयोग कौन करेगा, कौन नहीं करेगा। मेरा कार्य केवल देना है, केवल देना है। इसलिये कर्म का मूल्य फल की अपेक्षा कम नहीं होता है। जो अपना कर्त्तव्य निभाता है वही सच्चा योगी है।

योगी भाव से कर्म करना बहुत महत्वपूर्ण है। सूर्य योगी है, निरन्तर कर्मरत है।

आपका एक प्रश्न बार-बार मेरे सामने आता है कि हम कैसे कार्य करें?

ऐसे तो कार्य नहीं हो सकता जिसमें हम फल की इच्छा ही नहीं करें? क्योंकि हर मनुष्य में कर्म की भावना फल प्राप्ति के साथ ही आती है। तो फिर शास्त्रों में बार-बार यह क्यों कहा गया है कि हमें फल की अपेक्षा छोड़ देने चाहिये।

देखों भाई! जब हम फल के प्रति बहुत अधिक आकर्षित हो जाते है तो दो ही बातें मन में आती है -

पहला सकारात्मक फल की उम्मीद, यह तो हो ही जायेगा। मैं कर रहा हूं, अवश्य फल मिलेगा। ऐसी सोच जिसमें हम केवल परिणाम के बारे में अपने आपको केन्द्रित कर लेते है। वहां व्यक्ति थोड़ा आलसी हो जाता है।

अब दूसरी नकारात्मक फल का भय। अब आपने कार्य शुरु करने से पहले ही यह सोच लिया है कि इसमें तो मुझे सफलता नहीं मिलेगी तो क्या होगा? हम विफलता से डरते है और वह हमारी कर्म शक्ति को कमजोर कर देता है।

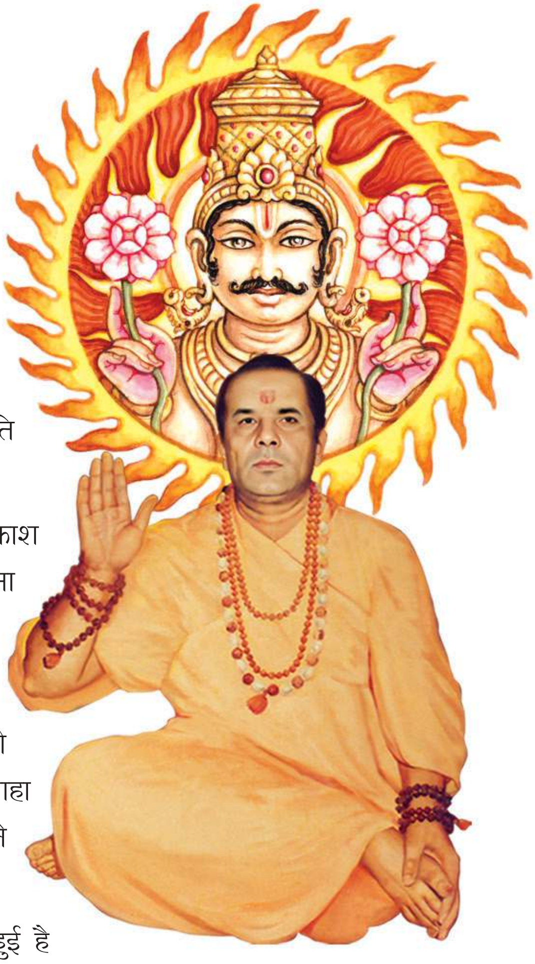

सूर्य महोत्सव है तो कर्म के सम्बन्ध में सूर्य हमें क्या सीखा रहे है।

1. रहो जीवन में नियमित – कैसी भी परिस्थिति हो सूर्य नित्य प्रति उदित होता ही होता है।

2. निस्वार्थ भाव – अब ऐसा तो नहीं है कि सूर्य किसी को प्रकाश दे और किसी को नहीं दे वह तो निस्वार्थ भाव से चारों ओर अपना प्रकाश देता है।

3. सूर्य का ज्ञान – जीवन में धैर्य।

सूर्य को कभी-कभी बादल ढक देते है, आपके जीवन में भी बाधाओं के बादल आ सकते है। कार्यों में देरी हो सकती है, जो चाहा उसके अनुसार नहीं होता है। धैर्य रखिये और सूर्य की भांति अगले दिन प्रकाशित होने के लिये तैयार रहे।

मैं साधकों से कहता हूं कि ऐसी कोई घनी अंधेरी रात नहीं हुई है जिसका अंत न हो। हर रात का अंत होता ही होता है क्योंकि सूर्य को आना ही आना है और रात को जाना ही जाना है।

सबसे महत्वपूर्ण बात जीवन में सूर्य की भांति त्याग भाव।

सूर्य अपने ऊर्जा का एक बहुत बड़ा भाग पृथ्वी को प्रदान करता है और उसी से तो जीवन संभव हो पाता है।

एक बीज को हम बहुत गहरे रोपते है। अंधेरे में रोपते है। उस पर भी सूर्य का ताप धरती को भेद कर पहुंच जाता है और वह अंकुरित हो जाता है। वह भी सूर्य के आकर्षण में अंकुरित होता है और धीरे-धीरे एक विशाल वृक्ष बन जाता है।

ईश्वर सब ओर से सहयोग देते है। बस हमारे अन्दर यह भाव आना आवश्यक है कि हमें हर हाल में अंकुरित होना है, अपने आपको बड़ा बनाना है, ऊंचा उठाना है।

सारे देवी-देवता आपको सहयोग देने के लिये तत्पर है। प्रार्थना में भी आप फल की इच्छा पहले रखते फिर प्रार्थना करते है।

एक कहानी मुझे याद आ रही है – एक राजा अपने राज्य क्षेत्र में भ्रमण कर रहा था, अपनी प्रजा का सुख-दुख का हाल जानने।

यही तो राजा का कर्त्तव्य है, जो जनता से बराबर जुड़ा रहे।

तो राजा जा रहा था और उसका कुर्ते का सोने का बटन टूट गया। अब टूटा बटन, खुला कुर्ता कैसे रखें, साथ में मंत्री था। कहा, मालूम करो इस गांव में कोई सुनार है या नहीं और वह मेरा बटन ठीक कर सकता है या नहीं।

अब गांव में एक ही सुनार था, उसके पास बटन लेकर गये। सुनार ने कहा मैं कर दूंगा और थोड़ी ही देर में उसने टूटे बटन को ठीक से गढ़ कर एकदम अच्छा बना दिया।

राजा बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने कहा, अरे भाई! कितना पारिश्रमिक हुआ। तो सुनार ने कहा कि – आप राजा है, आपसे क्या पारिश्रमिक। छोटा सा ही काम था मैंने कर दिया।

अब जो राजा होते है वे बड़े जिद्दी होते है। उन्होंने कहा कि पारिश्रमिक तो लेना पड़ेगा, बोलों।

अब सुनार मन ही मन विचार करने लगा और सोचा कि 2 रुपये मांग लेता हूं। फिर विचार आया कि इतने से काम के 2 रुपये मांगूगा तो पूरे गांव को पता चलेगा कि यह तो बड़ा लालची है। इसी भाव के साथ मन में मंथन चल रहा था। कितना मांगू, कैसे मांगू, मांगू या नहीं मांगू? कहीं गलत मांग लिया तो क्या होगा?

फिर मन ही मन मंथन कर कहा हे राजन्! हम तो आपकी प्रजा है। जो आपकी इच्छा हो वह प्रदान कर दो।

राजा ने अपने मंत्री को कहा, इस सुनार को दो गांव दान कर दो।

सुनार यह सुनते ही आश्चर्यचकित हो गया। अरे मैं कितनी बड़ी गलती कर बैठता, मैं सोच रहा था कि दो रुपये ही बहुत है और मुझे तो दो गांव मिल गये।

यही बात मनुष्य को अपने जीवन में अपनानी चाहिये। कभी देवताओं से, भगवान से आदान-प्रदान का नियम नहीं बनाना चाहिये। कि मैं आपके सवा लाख मंत्र जप कर रहा हूं आप मुझे यह फल निश्चित रूप से प्रदान करें। यह तो व्यापार हो गया। ईश्वर के साथ कैसा व्यापार?

निष्काम मन से ईश्वर का ध्यान करो। देव स्तुति करो। जो उसे देना है वह आपकी सोच से कई गुणा बढ़ा देगा।

अभी मैंने कहा कि यह मनुष्य जीवन क्या है? यह मनुष्य जीवन कामनाओं का समुद्र है और आपकी असंख्य कामनाएं हैं। आप प्रयत्न करते है कुछ कामनाएं पूर्ण होती है फिर कामनाओं के सागर में ओर गहरा गोता लगाते है, फिर कुछ और कामनाएं पूर्ण होती है और इस प्रकार आपका संसार चलता रहता है।

बहुत कम व्यक्ति ऐसे होते है जो अपने आप में प्रसन्न रहते है और कामनाओं का जाल-जंजाल बढ़ाते नहीं रहते है।

यहां भी एक विचित्र स्थिति है। कि कामनाओं का जाल बढ़ाया जाये या नहीं जाये? आप अपने मन में सोच लो सत्य यह है, आप बढ़ाते रहे हो क्योंकि हमारा सनातन धर्म चार सिद्धान्तों पर ही तो टिका है – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

और इसमें भी अर्थ प्राप्ति के लिये आपका विशेष आग्रह रहता है। अब मूल बात तो है जीवन का अर्थ लेकिन लोग अर्थ समझते है जीवन में धन की प्राप्ति । आज आप लक्ष्मी आबद्ध दीक्षा के लिये तत्पर है। आप चाहते है कि लक्ष्मी जीवनभर आपसे आबद्ध रहे।

क्या लक्ष्मी जीवन भर आबद्ध रह सकती है? आप समझते है लक्ष्मी का अर्थ धन और धन तो उपयोग और उपभोग के लिये होता है। इसे जीवनभर बांधकर तो नहीं रख सकते। बांधकर रखा तो लक्ष्मीदास बन जायेंगे और कर्मशील रहे तो लक्ष्मीपति बन जायेंगे।

आवश्यकता है लक्ष्मी के आवागमन की, आये और खर्च हो। हमारे पास आये और हम उसे उचित कार्यों में खर्च करें। घर-परिवार में सम्पन्नता रहे और उसे दान-पुण्य समाज, उपयोगी कार्य करने के लिये व्यय करें।

आय और व्यय का जोड़ है लक्ष्मी।

अब मैं प्रबंधन के बारे में कुछ बात कहना चाहूंगा। यह लक्ष्मी सूत्र है। इसे अपनायेंगे तो आप बहुत सुखी रहेंगे।

आप सभी परिश्रम करते है, धन प्राप्त करते है, धन खर्च करते है। तीन बातें मेरी नोट कर लो। क्योंकि धन तो खर्च करने के लिये ही होता है।

सबसे पहले आता है - अनिवार्य खर्च। जिसमें खान, पान और वस्त्र होते है। बच्चों की पढ़ाई, घर का किराया होता है और यदि खुद का घर नहीं है तो मैं आपको आशीर्वाद देता हूं कि जल्दी से जल्दी आप अपना स्वयं का घर बना दे।

अब ये जो अनिवार्य खर्च है वह तो करने ही पड़ेंगे, उसके बिना तो जीवन चल नहीं सकता। उसमें किसी प्रकार की कटौती नहीं कर सकते।

अब दूसरा खर्चा है आवश्यक खर्च - इसको बहुत संभाल कर करना है कि मैं लक्ष्मी का व्यय कर रहा हूं क्या यह व्यय करना आवश्यक है। तो वह व्यय अवश्य कीजिये और जो अनावश्यक है उसे रोक दीजिये।

अब तीसरी स्थिति आती है आकांक्षा। इसमें शौक-मौज और दिखावे का खर्च कहता हूं। जो न अनिवार्य है, न आवश्यक है। केवल दूसरों को दिखावें के लिये किया गया है। आप समझते है कि मैं धन का प्रदर्शन करूंगा तो लोग मुझे बड़ा समझेंगे।

अब समस्या क्या आती है? यदि हम हमारा जीवन अनिवार्य खर्च, आवश्यक खर्च और आकांक्षा के क्रम में चलाते है तब तो ठीक है लेकिन उल्टा चला दिया तो बड़ी ही दिक्कत हो जायेगी। पहले दिखावे के लिये कर दिया फिर आवश्यक खर्च किये तो अनिवार्य खर्च रह जायेंगे।

मेरी बात को ध्यान से समझना, तीन क्रम को निभाया तो लक्ष्मी आपके जीवन में स्थाईरूप से रहेगी।

लक्ष्मी को स्थाई रखना है तो जीवन में श्रीमति का होना आवश्यक है। अब श्रीमति का अर्थ स्त्री भी होता है, पत्नी भी होता है। श्री और मति, श्री अर्थात् लक्ष्मी, मति अर्थात् बुद्धि, सरस्वती।

जहां लक्ष्मी और सरस्वती एक जगह निवास करती है उसे श्रीमति कहते है। लक्ष्मी का स्वरूप भी स्त्री स्वरूपा है, श्री से युक्त है। उसे अर्जन भी आता है और बचत करना भी आता है।

इसी प्रकार श्रीमान् का अर्थ है - इसमें श्री क्या है लक्ष्मी। और मान् का अर्थ है गर्व, सम्मान। और लक्ष्मी के मान है श्रीविष्णु।

आप पुरुष हो, आप अपने आपको बहुत कर्मशील और महान् समझते हो लेकिन आज का शिविर में आधा शक्ति को समर्पित कर रहा हूं, जो निरन्तर क्रियाशील रहती है। शुरुआत में मैंने कहा था कि पुरुष के लिये सण्डे होता है लेकिन स्त्री के लिये कोई सण्डे, मण्डे नहीं। हर समय क्रियाशील, इसीलिये तो उसे शक्ति कहा जाता है।

और स्त्री और पुरुष की प्रकृति में भी बहुत अन्तर होता है। पुरुष हमेशा बाद में सोचता है, पहले काम में लग जाता है और इस कारण बड़ी-बड़ी गलतियां हो जाती है। जबकि स्त्री पहले विस्तार से सोचती है कि क्या आवश्यक है और क्या अनावश्यक है? वह कम में भी काम चलाना जानती है और ज्यादा हो गया तो वह संग्रह करना भी जानती है। यह मति है, यह बुद्धिमता है।

एक व्यवहारिक कथा है - पत्नी ने पति को फोन किया कि शाम को ऑफिस से आते समय मण्डी से सब्जी लेते आ जाना।

पुरुष देव पहुंचे सब्जी की दुकान, अब वहां तो सब्जियों का भण्डार लगा हुआ, सब तरह की सब्जियां। भूल गया था कि क्या सब्जी लाने का बोला, उसने सोचा कि पत्नी को खुश करने के लिये सब तरह की सब्जियां ले जाता हूं और 20 तरह की सब्जियां एक-एक किलो उठा ली, आलू भी, गोभी भी, टमाटर भी, भिण्डी भी, लौकी भी, तुरई भी, सेबफली भी, कद्दू भी।

भाई साहब स्कूटर पर बीस किलो का वजन लादे, घर पहुंचे। सोचा कि पत्नी प्रसन्न हो जायेगी और दोनों बाहें उठाकर घर में प्रवेश किया।

पत्नी ने पूछा ये सब क्या है, इतनी सब्जी। भोलेपन से कहा कि सब सब्जियां लिया हूं। जो मर्जी हो, जो बनाओं।

पत्नी ने सिर पर हाथ रखकर कहा कि हे भगवान कैसे पति से पाला पड़ा है जिसे इतना भी ज्ञान नहीं है घर में चार तो प्राणी है और मालूम नहीं है कि कल वापिस ताजी सब्जी मिल जायेगी, अब फ्रिज में भी जगह नहीं और यह भर-भर कर ले आया है।

यह पुरुष का शिव भाव है। हे भोले भण्डारी मेरा भण्डार भर दो। जबकि शक्ति भाव है, श्रीमति भाव है जो साधन है उनका समुचित उपयोग कैसे किया जायें?

जो कार्य हाथ में है उसे किस प्रकार से सम्पादित किया जाये कि उसका पूर्ण फल प्राप्त हो।

यह क्रिया केवल शक्ति ही कर सकती है क्योंकि शक्ति चैतन्य होती है वह जीवन का अविरल प्रवाह जानती है। वह अपने भीतर भण्डार भरकर नहीं रखती, वह उपयोग और उपभोग दोनों जानती है।

जो व्यक्ति शक्ति का उचित उपयोग करते है वही तो सफल है। इतना जान लीजिये कि शक्ति को आप एकत्र कर के नहीं रख सकते। उसे तो निरन्तर और निरन्तर चैतन्य रखना पड़ता है क्योंकि शक्ति स्वयं नित्य-नित्य जाग्रत है।

अब मैं सबसे महत्वपूर्ण बात कह रहा हूं कि हमारे जीवन में शारीरिक, आध्यात्मिक, भौतिक कष्ट न हो। एक ही उपाय है सूर्य से प्रेरणा लो, सूर्य की भांति निरन्तर और निरन्तर कर्त्तव्य करते रहो।

देखों, जीवन मिला है कर्त्तव्य निभाने के लिये। कर्तव्य करोगे तो अधिकार मिलेंगे। कर्तव्य से आप भाग नहीं सकते। जितने अच्छे तरीके से कर्तव्य निभाओंगे उतना ही आदित्य देव के आर्दशों पर चलोंगे।

कर्तव्य से भागने का अर्थ है - अपने जीवन के उद्देश्य से भागना।

आपके जीवन का क्या उद्देश्य है। हम अपने घर-परिवार और समाज का कल्याण करें।

हम प्रसन्न रहे, हम अपना कर्तव्य करते रहे और दूसरों की प्रसन्नता में भी सहयोग दे।

अपना कर्तव्य निभाने में कभी पीछ नहीं हटे, इस कर्तव्य पथ पर धैर्य के साथ आगे बढ़ना है, संयम के साथ आगे बढ़ना है।

मुझे एक बात समझ में आ रही है कर्तव्य पथ हाईवे है जिसे आपको एक शहर से दूसरे शहर जाना है तो आप हाईवे से जा सकते है या शहर के अन्दर-अन्दर से भी जा सकते है।

हाईवे को रास्ता, सीधा, सरल होता है पर हाईवे पर टोल कटता है।

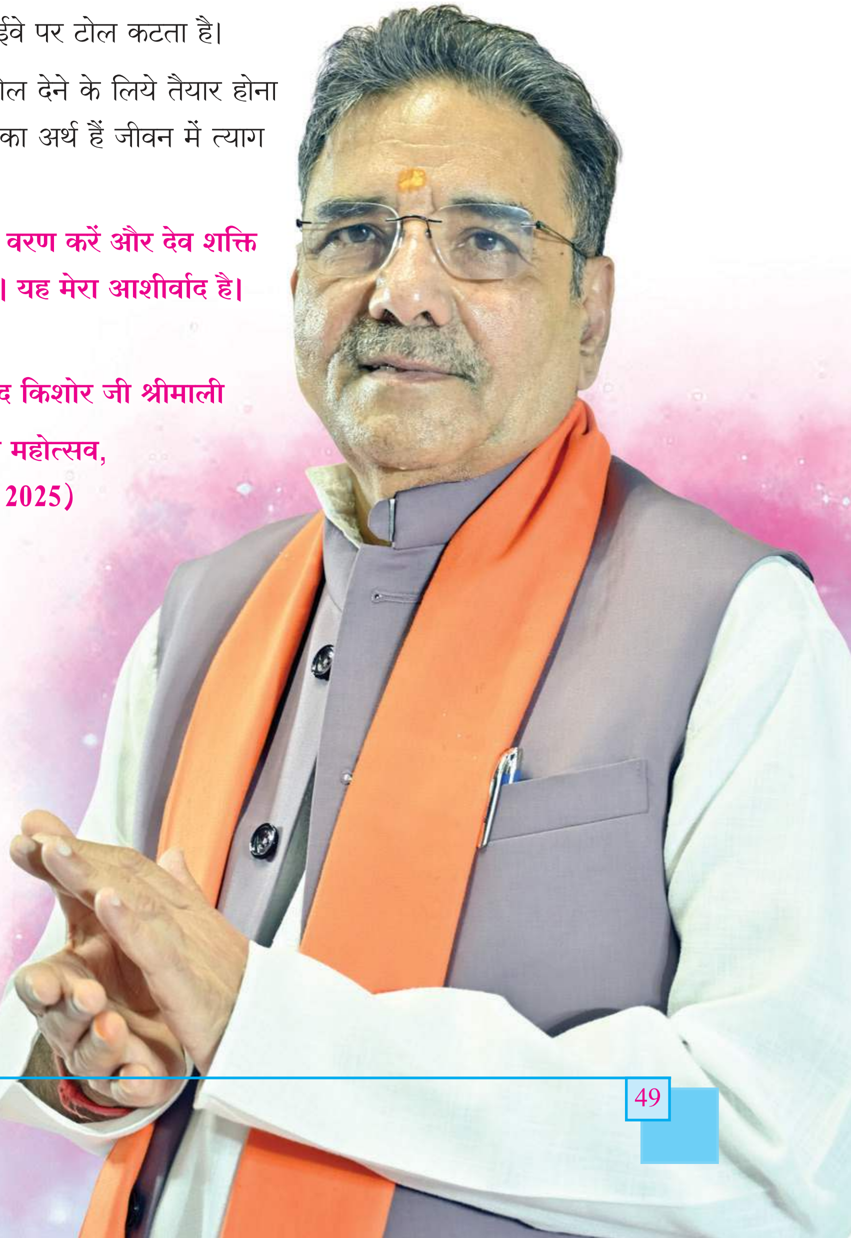

जीवन में सदैव सही मार्ग पर जाने के लिये टोल देने के लिये तैयार होना ही पड़ता है और कर्तव्य पथ के हाईवे पर बढ़ने का अर्थ हैं जीवन में त्याग का टोल, सेवा का टोल, संयम का टोल।

श्री आपका वरण करें, मति सरस्वती आपका वरण करें और देव शक्ति आपकी कामनओं से अधिक आपको प्रदान करें। यह मेरा आशीर्वाद है।

बहुत-बहुत आशीर्वाद...

परम पूज्य गुरुदेव नन्द किशोर जी श्रीमाली

(मकर संक्रान्ति महोत्सव,
सम्बलपुर - 2025)